JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मुंशी प्रेमचन्द : 'गोदान' में चर्चित समस्याएँ

इन्दुरानी मंडल

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग

विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल

शोध–सार

कहानी–कला को नवीन दृष्टि एवं दिशा प्रदान कर युगान्तर प्रस्तुत करने वाले मुंशी प्रेमचन्द जी का जन्म सन् 1880 ई0 में लमही गाँव में हुआ था, जो बनारस के पास है। इनके पिता का नाम श्री अजायबराय और माता का नाम आनन्दी देवी था। परिवार का मुख्य व्यवसाय कृषि था, जिससे पालन–पोषण के लिए उपयुक्त आय नहीं हो पाती थी। अन्त में इनके पिता को विवश होकर डाकखाने में बीस रुपये मासिक की क्लर्की करनी पड़ी। श्री प्रेमचन्द के जन्म के साथ वे इसी नौकरी में थे। निर्धनता के कारण परिवार का पालन–पोषण बड़ी कठिनाई से हो पाता था।

शब्दकुंजी : वैवाहिक जीवन, धर्म, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, मोह, दुःख एवं दरिद्रता आदि

भूमिका :

श्री प्रेमचन्द की तीन बहनें थी। दो की अकाल मृत्यु हो गई और एक बहुत दिनों तक जीवित रहीं। जब प्रेमचन्द आठ वर्ष के ही थे उनकी वात्सल्यमयी माता आनन्दी देवी भी छ मास रूग्ण शय्या पर रहने के पश्चात् दिवंगत हो गई। इस प्रकार वे अल्पायु में ही मातृ–स्नेह से वंचित हो गये। प्रेमचन्द का बचपन का नाम धनपतराय था, किन्तु इनके चाचा इन्हें नवाबराय के नाम से पुकारते थे। प्रेमचन्द का पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ही विवाह हो गया, किन्तु दाम्पत्य जीवन सुखद न रहा। इनकी पत्नी इनसे अवस्था में बड़ी और अत्यन्त कुरूप थीं। इसके अतिरिक्त वह कलह–प्रिय थी, जिससे घर विषाद–मग्न रहता था। अन्त में प्रेमचन्द ने उनका परित्याग कर शिवरानी से विवाह कर लिया। शिवरानी बाल विधवा थीं। सोलह वर्ष की अवस्था में प्रेमचन्दजी ऊपर से पिता का साया भी उठ गया। बेचारे प्रेमचन्द अल्पायु में ही मातृ तथा पितृ स्नेह से वंचित हो गये।[1]

शिक्षा–दीक्षा

पाँच वर्ष की अवस्था में प्रेमचन्द की शिक्षा का प्रारंभ एक मौलवी साहब के पास हुआ। पुरानी पीढ़ी के पिता ने उर्दू में अभिरुचि होने के कारण उर्दू की शिक्षा दिलवाया, धीरे–धीरे प्रेमचन्द का इस भाषा पर अधिकार होने लगा। चार वर्ष बाद उनके पिता की जमनिपुर में बदली हो गई। आर्थिक अभाव से पीड़ित पिता ने वहाँ डेढ़ रुपये मासिक का एक बहुत ही गन्दा मकान किराये पर लिया। मकान इतना गन्दा था कि प्रेमचन्द वहाँ ना रह पाते और एक तंबाकु वाले के मकान में चले जाया करते थे। त्रयोदश वर्षीय प्रेमचन्द को मिशन स्कूल की छठी कक्षा में प्रवेश दिलाया गया। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में प्रेमचन्द काशी आये, जहाँ वे नवीं कक्षा में पढ़ने लगे। इसी बीच उनके पिता की मृत्यु हो गई और उनको ट्यूशन द्वारा जीवन–निर्वाह का आश्रय लेना पड़ा। प्रातः बेला में वे पाँच–छः मील पैदल चलकर शहर पहुँचते थे, पढ़ाई के पश्चात् ट्यूशन करते और फिर पैदल ही रात के आठ बजे तक घर लौटते। इन कष्टमय परिस्थितियों में भी उन्होंने अन्त में द्वित्तीय श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। प्रेमचन्द तेल की कुप्पी जलाकर पढ़ते थे और जो कुछ रूखा–सुखा मिल जाता, उसे ही खाकर सन्तुष्ट रहते थे। किन्तु इतने पर भी जीवट इतने थे कि उन्होंने कठिनाइयों के सामने घुटने नहीं टेके और इण्टर की परीक्षा पास करने के लिए निरन्तर प्रयास करते रहे। इण्टर में गणित की अनिवार्यता के कारण उन्हें कई बार असफल भी होना पड़ा। अन्त में जब गणित ऐच्छिक विषय हो गया, तब वे सन् 1910 ई0 में जैसे–तैसे इण्टर की परीक्षा में सफल हुए। इन्हीं दिनों उन्हें महाजनों के कटु एवं निर्मम व्यवहार का भी अनुभव हुआ। आर्थिक अभावों के शिकार प्रेमचन्दजी को महाजनों से रुपया जो ऊधार लेना होता था। बाद में उन्होंने व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूप में सन् 1919 ई में बी.ए. की परीक्षा भी उर्त्तीण कर ली।[2]

जीविका के विविध आयाम :

प्रेमचन्दजी की जीविका का प्रमुख साधन अध्यापन था। मैट्रिक के बाद ही उन्हें एक छोटे से स्कूल में अठारह रुपये मासिक पर अध्यापन कार्य मिल गया था। बाद में गोरखपुर, कानपुर, वाराणसी और बस्ती आदि स्थानों में अध्यापक रहे। इसके बाद प्रगति करते–करते वे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में सब–डिप्टी इन्सपेक्टर हो गये। वे उक्त पद पर बारह वर्ष रहे और सफलतापूर्वक कार्य किया। सब–इन्सपेक्टर के रूप में उन्होंने महोबे के जीवन का भी अध्ययन किया। इस सेवा काल में उन्हें न केवल अपने जीवन के कटु अनुभव हुए, वरन् भारत के एक विशाल भू–भाग की जनता का निर्धनता पीड़ित हृदय–द्रावक दृश्य भी देखा, जिसका चित्रण उनके साहित्य में दृष्टव्य है।[3]

'गोदान' में चर्चित समस्याएँ :

'गोदान' में कृषक–जीवन की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि दशाओं का युग–दशाओं के अनुरूप चित्रण हुआ है। इसमें पुलिस और बिरादरी के शोषण की स्थितियाँ भी चित्रित हुई हैं। नगर–जीवन का चित्रण ग्रामीण जीवन के समान पूर्ण नहीं है, लेकिन उसके अनेक पक्षों का चित्रण हुआ है। 'गोदान' में समाख्यानक उपकरणों में वर्णन की प्रधानता है, इसमें लेखक की निरपेक्ष और सापेक्ष, दोनों ही प्रकार की टिप्पणियाँ हैं। 'गोदान' में पात्रों के कार्यों के समर्थन एवं उनकी आलोचना से परिपूर्ण लेखकीय टिप्पणियाँ भी हैं। उपन्यास की अन्य टिप्पणियाँ किसान, वैवाहिक जीवन, धर्म, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, मोह, दुःख, दरिद्रता आदि मानव–जीवन के विविध पक्षों से सम्बन्धित हैं। लेखक की सत्ता अनेक टिप्पणियों के रूप में विद्यमान होने पर भी अनेक आलोचकों को लेखक का तटस्थ, निस्संग और अप्रत्यक्ष प्रतीत होना लेखक की कौशलपूर्ण संरचना का प्रमाण है।[4]

'गोदान' उपन्यास में लेखक ने नाटकीय प्रवृत्तियों को समाविष्ट करने की चेष्टा की है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में 'गोदान' ऐसा उपन्यास है, जिसकी महाकाव्यात्मकता पर सबसे अधिक चर्चा हुई। उपन्यास की कथा–सृष्टि और चरित्र–निर्माण में लेखक की महाकाव्यीय चेतना झलकती है। 'गोदान' प्रेमचन्द के उपन्यासों की कड़ी में एक विशिष्ट गौरवपूर्ण स्थान रखता है, यह विगत विवेचन से स्पष्ट हो गया है। यह उपन्यास के समग्र कृतित्त्व में एक विशिष्ट शैल्पिक उपलब्धि है। अपने समय की बदलती हुई सामाजिक स्थिति का जितना सफल और सार्थक चित्रण प्रेमचन्द ने 'गोदान' में किया है[5], वह उनके कलाकार पक्ष की सबलता का परिचायक है। उसमें अनेक समस्यायें उठ खड़ी हुई हैं, जिनका चित्रण इस प्रकार है :–

(1) तलाक की समस्या–प्रेमचन्द साहित्य में एक ही प्रसंग है, जहाँ पति–पत्नी में तलाक होता है। 'गोदान' के रायसाहब अमरपालसिंह की पुत्री मीनाक्षी पति के दुराचार के कारण उससे सम्बन्ध–विच्छेद कर लेती है, साथ ही गुजारे का भी दावा कर देती है। इस सम्बन्ध में प्रेमचन्द लिखते हैं– ''गुजारे की मीनाक्षी को जरूरत न थी। मैके में वह बड़े आराम से रह सकती थी, मगर वह दिग्विजय सिंह के मुँह में कालिख लगाकर यहाँ से जाना चाहती थी।''[6] इस तलाक के बाद पति–पत्नी एक–दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं। मीनाक्षी और दिग्विजय सिंह के सम्बन्ध–विच्छेद के माध्यम से प्रेमचन्द यह दिखाना चाहते हैं कि पति के आत्याचार से पीड़ित होकर पत्नी अगर तलाक का आश्रय लेने के लिए विवश हो जाय, तो भी शान्ति नहीं मिल सकती क्योंकि प्रतीकार और प्रतिशोध की भावना दाम्पत्य जीवन को कटु से कटुतर बना देती है।

(2) वेश्या–समस्या– 'गोदान' उपन्यास में वेश्यावृत्ति अपनाने के दो कारण बताये गये हैं–आर्थिक कठिनता और सम्मान का अभाव। डॉ0 मेहता और मिर्जा साहब के बीच इसी बात पर बहस होती है। मिर्जा साहब कहते हैं कि, ''रूप के बाजार में वही स्त्रियाँ आती हैं, जिन्हें या तो अपने घर में किसी कारण से सम्मानपूर्ण आश्रय नहीं मिलता था, जो आर्थिक कष्टों से मजबूर हो जाती हैं।''[7] पर मेहता

इसका विरोध करते ओर खींचती है। ''वे आगे कहते हैं– ''रोजी के लिए और बहुत–से जरिए हैं। ऐश की भूख रोटियों से नहीं जाती। उसके लिए दुनिया के अच्छे–अच्छे पदार्थ चाहिए।''[8] मिर्जा साहब जोर देकर कहते हैं– ''और मैं कहता हूँ कि यह महज रोजी का सवाल है। हाँ, यह सवाल सभी आदमियों के लिए एक–सा नहीं है। मजदूर के लिए वह महज आटे–चावल और एक फूँस की झोंपड़ी का सवाल है। एक वकील के लिए वह एक कार और बंगले और खिदमतगारों का सवाल है। आदमी महज रोटी नहीं चाहता और भी बहुत–सी चीजें चाहता है। अगर औरतों के सामने भी वह प्रश्न तरह–तरह की सूरतों में आता है, तो उनका क्या कसूर है।''[9]

(3) औद्योगिक समस्या–औद्योगिक से पूँजीवादी मनोवृत्ति का उदय होता है। देश का सारा धन थोड़े से पूँजीपतियों के हाथ में एकत्र हो जाता है। प्रेमचन्द ओद्योगिक सभ्यता के इन परिणामों से पूर्णतया परिचित थे। 'गोदान' का चन्द्रप्रकाश खन्ना बजट में शक्कर पर ड्यूटी लगने पर अपनी आमदनी में होने वाली कमी को मजदूरों की मजदूरी घटाकर पूरा करना चाहता है। प्रेमचन्द–साहित्य में मजदूर–पूँजीपति के संघर्ष का चित्रण तो हुआ है, पर मजदूरों की राजनीतिक चेतना का चित्रण नहीं है। 'गोदान' में मजदूरों की राजनीतिक चेतना का संकेत मात्र है। गोबर शहर में आकर मजदूरी करने लगता है। शहर में नित्य सभायें होती रहती हैं, जिससे गोबर को भी राजनीति का थोड़ा ज्ञान हो जाता है।

(4) किसान–जमींदार समस्या–समस्या के एक छोर पर किसान हैं, दूसरे पर जमींदार। परिस्थितियों की अनिवार्य गति में जमींदार देख रहें हैं कि उनकी जमीन पैरों–तले से खिसकती जा रही है, यद्यपि ये जमींदार अपने–आपको समय के अधिक से अधिक अनुकूल बनाने के प्रयत्न में सचेष्टता से लगे हुए हैं। बदला हुआ युग महाजनों का है, जो गाँव में किसानों और शहरों में जमींदारों को खोखला बनाये जा रहे हैं। सामन्ती व्यवस्था में तब भी एक सीमा है, लेकिन पूँजीवादी व्यवस्था, महाजनी सभ्यता तो ऐसी है जिसमें कि गरीब और अधिक गरीब तथा अमीर और अधिक अमीर होता जाता है। इस व्यवस्था के दो स्पष्ट प्रतीक खन्ना और तनखा हैं।

(5) धर्म का ढकोसला–प्रेमचन्द ने परम्परागत धर्म की अपने उपन्यासों में स्थान–स्थान पर खूब धज्जियाँ उड़ाई हैं। इसके लिए उन्होंने व्यंग्य का जबर्दस्त शस्त्र प्रयोग किया है। इस व्यंग्य के मूल में घृणा है। हम इन आलम्बनों पर हँसकर नहीं रह जाते, अपितु घृणा से भर जाते हैं। अतः ऐसे व्यंग्य को हमने वीभत्स रस का ही विषय माना है। 'गोदान' में भी प्रेमचन्द ने धार्मिक पाखण्ड की गिन–गिनकर कड़ियाँ तोड़ी है। इस रचना तक आते–आते ईश्वर और तथाकथित धर्म के प्रति उनका मन विशेष–रूप से अविश्वासी हो गया था। जिस ईश्वर का रुद्र बेचारे किसान को शोषण की चक्की में पीसता है, जो गरीब को भाग्यवादी बनाये रखता है, उसे और उसके भक्तों को उन्होंने हर स्थान पर व्यंग्य–बाणों से भेदा है। बड़े आदमियों का दान–धर्म कोरा पाखण्ड है। जब होरी गोबर से कहता है कि मालिक चार घण्टे भगवान का भजन करते हैं, भगवान की उन पर दया क्यों न हो, तो गोबर

व्यंग्य करता हुआ कहता है– ''यह पाप का धन पचे कैसे ? इसीलिए दान–धर्म करना पड़ता है। भूखे–नंगे रहकर भगवान का भजन करें तो हम भी देखें। हमें कोई दोनों जून खाने को दे तो हम आठों पहर भगवान का जाप ही करते रहें, एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जायें।''[10]

(6) ग्रामीण और नागरिक जीवन की विषमता–चित्र में तभी पूर्णता आती है, जब प्रकाश को उज्ज्वल बनाने के लिए उसमें अन्धकार की भी तनिक पृष्ठभूमि चित्रित हो। 'गोदान' की यही सफलता एवं पूर्णता कुछ आलोचकों की दृष्टि में दोष बन गई है। ग्राम में सरलता है, दुःख है, अज्ञान का गहन अन्धकार है और नगर में कुटिलता है, सुख है एवं सभ्यता की टीमटाम, लिपिस्टिक की चमक और किताबी ज्ञान का प्रकाश है। एक ही शाखा है, लेकिन दो रंग के पुरुष हैं। एक ही चित्र है, परन्तु उसके दो पहलू हैं। एक ही मकान है, लेकिन दो खण्ड हो गये हैं। प्रेमचन्द इनमें भेद उन्पन्न करने वाली दीवार को गिराना चाहते थे। इसीलिए गोबर शहरी जीवन का अनुभव प्राप्त कर अन्याय एवं शोषण के समक्ष घुटने टेकने से इन्कार कर देता है। मेहता एवं मालती ग्रामीण जीवन के अध्ययन द्वारा सरलता एवं सेवा का आडम्बरी मार्ग चुनते हैं। इस प्रकार 'गोदान' के लेखक का उद्देश्य कथानक द्वारा भारतीय ग्रामीण और नागरिक जीवन की विषमता दिखाना है।

'गोदान' में ग्रामीण और नागरिक समाज की अनेक समस्याओं पर दृष्टिपात किया गया है। इन समस्याओं में सामाजिक और आर्थिक पहलुओं पर प्रेमचन्द ने विशेष ध्यान दिया है। ग्रामीण समाज के चित्रण में उन्होंने सम्मिलित परिवार प्रथा की समस्या, अन्धविश्वास और धर्मभीरुता, जमींदार, कारिंदे, पटवारी आदि द्वारा शोषण, लगान चुकाने की कठिनाई के कारण बेदखली, पूँजीपति, साहूकार, सरकारी अफसरों, पुलिस, ग्रामीण पंचों द्वारा शोषण, अशिक्षा के कारण ग्रामीणों की दशा इत्यादि का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त वैवाहिक–पद्धति के दोष, शहर के युवक–युवतियों में पाश्चात्य प्रभाव के कारण स्वच्छन्द–विहार की प्रवृत्ति आदि पर भी विहंगम दृष्टि डाली गयी है। प्रेमचन्द ने इन बुराइयों की ओर हमारी घृणा जगाकर समाज में आमूल परिवर्तन करने का संकेत किया है। इनमें ग्राम–जीवन और नगर–जीवन के सभी वर्गों का चित्रण है। गाँव में अगर किसान, महाजन, जमींदार कारिंदे, पटवारी, साहू, सहुआइन, ग्वाला, ग्रामीण, जवान छोकड़े, पंडित, दरोगा आदि सभी वर्ग का चित्रण है, तो सम्पूर्ण शहरी–जीवन के सभी वर्गों का चित्रण भी है। शहर में जमींदार (रईस), सम्पादक, मिल–मालिक, असेम्बली के मेम्बर, प्रोफेसर, वकील, इंश्योरैंस के एजेण्ट आदि सभी वर्ग के पात्र अपने–अपने वर्गों का चित्रण करते हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि इस उपन्यास के केन्द्र में ग्राम्य सुधार एवं निर्माण की समस्या है। उपन्यासकार ने इन समस्याओं के समाधान का प्रयत्न अवश्य किया, परन्तु उसे बहुत कम सफलता मिली है।

संदर्भ–सूची :

1. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–258
2. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–260
3. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–260
4. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–260
5. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–260
6. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–20
7. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–239
8. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–196
9. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–120
10. मुंशी प्रेमचंद (2006) ' 'गोदान', राजा पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ0–287